REVIEW OF RESEARCH
ISSN: 2249-894X
IMPACT FACTOR : 5.7631(UIF)
VOLUME - 13 | ISSUE - 7 | APRIL - 2024

मुगल–सिख अन्तर्सम्बन्ध

डॉ. उमेश चन्द्र यादव
असिस्टेंट प्रोफेसर (इतिहास) बुन्देलखण्ड महाविद्यालय झाँसी

सारांश–

प्रस्तुत शोधपत्र में द्वितीयक स्रोतों के आधार पर मुगल एवं सिखों के सम्बंधों को उदघाटित करने का प्रयास किया गया है। इस शोध पत्र का मुख्य उद्देश्य मुगल काल की घटनाओं एवं परिस्थितियों की समीक्षा करना तथा मुगल–सिख अन्तर्सम्बन्ध का विश्लेषणात्मक अध्ययन करना। 16वीं शताब्दी में गुरू नानक ने छुआ–छूत और हिन्दू–मुस्लिम मतभेद को दूर करने का प्रयास किया। इसी दौर में भारत में मुगल साम्राज्य की स्थापना हुई। बाबर से लेकर अकबर तक मुगलों ने सिख गुरुओं के साथ उदारता पूर्ण व्यवहार किया, परन्तु जहाँगीर के सिंहासनारोहण के बाद परिस्थितियाँ बदल गयीं। जहाँगीर ने गुरू अर्जुन देव को राजनीतिक, धार्मिक और व्यक्तिगत कारणों से दण्डित किया। इस घटना ने सिखों को सैनिक सम्प्रदाय और गुरू को सैनिक संत बनने की भावना प्रदान की। यही वह घटना है जहाँ से सिख मुगल सत्ता के विरोधी बन गये। गुरू हरगोविन्द की कार्य प्रणाली भी जहाँगीर को पसन्द नहीं आयी और उन्हें दो वर्ष के लिए कारागार में डाल दिया इससे यह सिद्ध हो गया कि भविष्य बड़ा कठिन और संकटमय होगा। शाहजहाँ की धार्मिक नीति भी अपेक्षाकृत अनुदार थी, अतः मुगलों के साथ सिखों के अनेक संघर्ष हुए। औरंगजेब के सम्बन्ध भी धार्मिक और राजनीतिक कारणों से तनाव पूर्ण बने रहे, उसने गुरू तेगबहादुर को मृत्युदण्ड दिया। इससे सिखों के मन में मुगलों के प्रति और कटुता उत्पन्न हुई। गुरू गोविन्द सिंह ने औरंगजेब के कट्टर शत्रु बन गए और अपनी सैन्य क्षमता को बढ़ाया तथा मुगलों से लोहा लिया जिसमें उनके दो पुत्र शहीद हो गये। गुरू गोविन्द के बाद बन्दाबहादुर ने सिखों का नेतृत्व किया मुगलों से निरंतर संघर्ष करता रहा और मारा गया। इसके बाद भी स्थितियाँ तनाव पूर्ण बनी रहीं।

मुख्य शब्द– आब, छुआ–छूत, गुरूमुखी, आदिग्रंथ, सतनामी, मद्देमाश आदि।

प्रस्तावना–

मध्य–युग के धार्मिक जीवन की एक प्रमुख विशेषता भक्ति आन्दोलन रहा, जिसने पंजाब को भी प्रभावित किया। हिन्दू और मुसलमान दोनो धर्मों की समानता में विश्वास करने वाले तथा हिन्दुओं और मुसलमानों दोनो को एक दूसरे के निकट लाने का प्रयत्न करने वाले सन्तों में से एक महान संत गुरूनानक हुए। पंजाब उनका कार्य क्षेत्र रहा तथा पंजाब के इतिहास पर उनका गहन प्रभाव है। पंजाब फारसी भाषा के शब्द पंज (पाँच) और आब (पानी) से मिलाकर बना है, जिसका अर्थ होता है पाँच नदियों का देश। इन पाँच नदियों में झेलम, चिनाब, रावी, व्यास, तथा सतलज सम्मिलित हैं। गुरू नानक का अभिप्राय एक नया पंथ चलाने का नही था उन्होंने न तो किसी धार्मिक पुस्तक की रचना की और न ही किसी स्थान को धार्मिक स्थल बनाने का प्रयत्न किया, उन्होंने केवल शिष्य बनाये थे जो कालान्तर में 'सिख' कहलाए और एक धार्मिक सम्प्रदाय के रूप में संगठित हो

गये। पंजाब में आज भी बड़ी संख्या में सिख निवास करते हैं। सिख धर्म के प्रवर्तक गुरू नानक का जन्म 1469 ई0 में तलवंडी ,जिसे ननकाना साहब भी कहते हैं, में हुआ था। यह स्थान लाहौर से 35 मील दक्षिण–पश्चिम में रावी नदी के निकट स्थित है। हिन्दू समाज में व्याप्त छुआ–छूत तथा हिन्दू–मुस्लिम मतभेदों को दूर करने के लिए 16वीं शताब्दी के आरम्भ में गुरू नानक ने सिख सम्प्रदाय को प्रतिस्थापित किया। वास्तव में सामाजिक कुरीतियों को दूर कर लोगो में भाईचारा स्थापित करने का गुरूनानक का यह एक उत्तम प्रयास था। उन्होंने न केवल मूर्तिपूजा का खण्डन किया, वरन जाति भेदभाव तथा ब्राह्मणों एवं मुल्लाओं की श्रेष्ठता का भी खण्डन किया गुरूनानक की मृत्यु के बाद उनके उत्तराधिकारी गुरूओं ने सिख सम्प्रदाय को और आगे बढ़ाया।

वस्तुतः सिख सम्प्रदाय का निर्माण मुगल शासन काल में हुआ। गुरूनानक (1469–1539 ई0) मुगल बादशाह बाबर और हुमायूँ के समकालीन थे। गुरूनानक की इच्छा के अनुसार उनके शिष्य अंगद (1539–1552 ई0) दूसरे गुरू हुए। जिन्होंनें सिखों को गुरूमुखी लिपि प्रदान किया। हुमायूँ ने 1540 ई0 में अंगद से पंजाब में उस समय भेंट की जब वह शेरशाह से बिलग्राम (कन्नौज) के युद्ध में परास्त होकर भटक रहा था। गुरू अंगद ने राजनीति में हस्तक्षेप नही किया और सूर वंश के शासकों ने भी उनके धर्म प्रचार के कार्य में कोई हस्तक्षेप नही किया। तीसरे गुरू अमरदास (1552– 1574 ई0) और चौथे गुरू रामदास (1574–1581 ई0) के मुगल बादशाह अकबर से अच्छे संम्बन्ध रहे। अकबर ने पंजाब में अमरदास से भेंट की थी और उनसे प्रभावित हुआ। उनके शिष्यों को तीर्थ यात्रा कर से मुक्त कर दिया था और उनकी पुत्री के नाम से कई गाँव दान दिए थे। बादशाह ने 1577 ई0 मे रामदास को 500 बीघा भू–क्षेत्र मददेमाश के रूप में प्रदान किया जिसमें एक प्राकृतिक तालाब था, कालान्तर में यहीं पर अमृतसर शहर की नींव पड़ी। रामदास द्वारा अपने तीसरे पुत्र अर्जुन को गुरू पद सौप देने से सिखों के गुरू का पद पैतृक बनाए जाने की व्यवस्था आरम्भ हो गयी। गुरू अर्जुन देव ने सिखों की पवित्र धर्म पुस्तक 'आदि ग्रंथ' अथवा 'गुरू ग्रंथ साहिब' का संकलन पूर्ण कराया था। खुशवंत सिंह के अनुसार "यह एक अदभुत ऐतिहासिक पुस्तक है"। अकबर और गुरू अर्जुनदेव के मध्य संबन्ध अच्छे थे, किन्तु जहाँगीर के सिंहासनारोहण के पश्चात स्थिति बदल गयी। अर्जुनदेव को जहाँगीर द्वारा दण्डित किया गया। इसके राजनीतिक, धार्मिक और व्यक्तिगत कारण थे। गुरू अर्जुनदेव ने विद्रोही शहजादे खुसरो की आर्थिक सहायता की तथा सफलता की शुभकामना भी दी थी जिससे जहाँगीर रूष्ट हो गया। जहाँगीर को सिखों की बढ़ती हुई प्रसिद्धि भी नही भाती थी। उसे हिन्दुओं और मुसलमानों का सिख पंथ में प्रविष्ट होना भी नही रूचा। लाहौर का दीवान चन्दूशाह अपनी पुत्री का विवाह अर्जुन देव के पुत्र से करना चाहता था किन्तु गुरू ने अस्वीकार कर दिया, चन्दूशाह ने इसे अपना अपमान समझा तथा अर्जुनदेव के खिलाफ जहाँगीर का कान भरने लगा। परिणामतः जहाँगीर ने गुरू अर्जुनदेव पर दो लाख का जुर्माना लगाया परन्तु गुरू ने यह राशि देने से इंकार कर दिया इस कारण बादशाह ने गुरू की सम्पत्ति जब्त करने तथा उन्हें कैद करने का आदेश दिया। बन्दीगृह में ही कठोर यातनाएँ देकर 1606 ई0 उन्हें मार दिया गया। इस घटना का सिखों पर बहुत व्यापक प्रभाव पड़ा। उन्होंने इसे अपने धर्म पर प्रथम आक्रमण माना, उस समय से सिखों को शस्त्र धारण करने की आवश्कता महसूस हुई। गुरू अर्जुन देव की पीड़ायुक्त मृत्यु ने सिखों को सैनिक सम्प्रदाय और गुरू को सैनिक संत बनने की भावना प्रदान की। यही वह घटना है जहाँ से सिख मुगल सत्ता के विरोधी बन गये।

गुरू अर्जुनदेव के बाद हरगोविंन्द उनके उत्तराधिकारी बने। हरगोविन्द के साथ प्रारम्भ में जहाँगीर ने सद्व्यवहार की नीति अपनायी। हरगोविन्द ने धर्म की रक्षा के लिए सिखों को सैनिक बनाने की नीति आरम्भ की। इस प्रकार गुरू हरगोविन्द ने सिखों में सैनिक भावना, सैनिक शिक्षा और स्वरक्षा के लिए शस्त्र धारण करने की क्रिया को आरम्भ किया। जहाँगीर हरगोविन्द की सैनिक नीति को सहन नही कर पाया और गुरू ने भी शाही आदेशों के उलंघन की नीति का अनुसरण किया, इस कारण जहाँगीर ने हरगोविन्द से उनके पिता पर किए गए जुर्माने की माँग की गुरू के मना करने पर उन्हें ग्वालियर के किले में बन्दी बना दिया। दो वर्ष या उससे भी अधिक समय तक गुरू वहाँ रहे। परन्तु उसके पश्चात उन्हें बिना शर्त मुक्त कर दिया गया। इसके बाद जहाँगीर के शासनकाल में सिखों का कोई विवाद मुगलों के साथ नही हुआ। इन्दु बनर्जी के अनुसार," आन्तरिक और वाह्य रूप से परिस्थितियाँ वेग से बदल रहीं थीं और गुरू की नीति को विवशता में नये वातावरण में अपना स्थान बनाना पड़ा। सिखपंथ के संगठन का अधिक कार्य अकबर के समय में हुआ, जिसने कभी भी इनके बीच हस्तक्षेप नही किया, वरन कई प्रकार से गुरूओं की सहायता ही की। गुरू अर्जुन देव का बलिदान

और हरगोविन्द के बन्दी बनाए जाने ने यह सिद्ध कर दिया कि भविष्य बड़ा कठिन और संकटमय होगा तथा शान्तिमय संगठन अब पर्याप्त नही रहा। गुरू अर्जुनदेव ने यह अनुभव किया और हरगोविन्द ने भी स्पष्ट रूप से देखा कि सिख जाति और सिख संगठन की रक्षा अब बिना शस्त्रों की सहायता के सम्भव नही है। इस दिशा में जिस शैली से उन्होंने अपनी कार्य सिद्धि के लिए प्रयत्न आरम्भ किया वह उनकी दूरदर्शिता और तीव्र राजनीतिक ज्ञान का द्योतक है।"

वस्तुतः जहाँगीर के अन्तिम समय में मुगल–सिख संघर्ष स्थगित रहा लेकिन शाहजहाँ के सिंहासन पर बैठते ही सिखों का मुगलों से संघर्ष पुनः आरम्भ हो गया। शाहजहाँ के शासनकाल में मुगलों की धार्मिक नीति अपेक्षाकृत अनुदार रही। शाहजहाँ ने असहिष्णुता का परिचय दिया। उसने सिखों की भावना को उस समय चोट पहुँचाई जब उसने अर्जुन बावड़ी को मिट्टी से भरवाकर वहाँ एक मस्जिद का निर्माण करवाया। आरम्भ में सिखों एवं मुगलों में घोड़ों एवं बाजों को लेकर झगड़ा हुआ बाद में इस बात को लेकर सिखों ने बड़ा विद्रोह कर दिया, जिसके कारण दोनों पक्षों के हजारों लोग मारे गए। 1634 ई0 अमृतसर के निकट सिख एवं मुगल सेना की एक टुकड़ी के बीच युद्ध हुआ। इसके बाद गुरू हरगोविन्द करतारपुर चले गए जहाँ पर उन्होने किलेबन्दी कर रखी थी तब भी मुगलों से समय–समय पर संघर्ष होते रहे। अन्ततः यह समझकर कि सिख अभी मुगलों की शक्ति का मुकाबला नही कर सकते और संघर्ष करने से धर्म की सुरक्षा करना कठिन होगा। इसके बाद हरगोविन्द कीरतपुर चले गए जो कहलूर–राज्य में एक हिन्दू राजा के अधीन था तथा जहाँ मुगलों का प्रत्यक्ष प्रभाव नहीं था। इस कारण हरगोविन्द के बाद के समय में सिखों और मुगलों में संघर्ष नही हुआ। यहीं पर 1645 ई0 में गुरू हरगोविन्द की मृत्यु हो गयी। गुरू हरगोविन्द के बाद हरराय (1645–1661 ई0) उनके उत्तराधिकारी बने । नये गुरू ने शांतिमय धर्म प्रचार की नीति अपनायी और मुगल शहजादा दारा शिकोह जो कि उदार धार्मिक विचारों का था विभिन्न सम्प्रदायों के संतो से मिलता रहता था इसी प्रकार वह गुरू हरराय से मिला। दारा को गुरू ने सहायता, आशीर्वाद और शुभकामनाएं देकर कृतार्थ किया। इससे औरंगजेब गुरू से अप्रसन्न हुआ। उसने गुरू को अपने दरबार में बुलाया किन्तु गुरू किसी बहाने से स्वयं न जाकर अपने पुत्र रामराय को भेज दिया। रामराय मुगल दरबार में पहुँचकर औरंगजेब का कृपापात्र बन गया। गुरू के पुत्र ने औरंगजेब को प्रसन्न करने के लिए कुछ ऐसा कार्य कर दिया जिनकी सूचना गुरू को मिलने पर गुरू हरराय ने उसे अपना उत्तराधिकारी मानने से इंकार कर दिया और अपने छोटे पुत्र हरकिशन को अपना उत्तराधिकारी घेषित कर दिया। 1661 ई0 में जब गुरू की मृत्यु हो गयी तब रामराय ने गुरू की गद्दी का दावा किया। अन्ततः यह समस्या औरंगजेब के समक्ष प्रस्तुत की गई जिसने हरिकिशन के पक्ष में निर्णय दिया। परन्तु तीन वर्ष के बाद चेचक से उनकी मृत्यु हो गयी। 1664 ई0 में अपनी मृत्यु से पूर्व गुरू हरिकिशन ने कहा था कि उनका उत्तराधिकारी बकाला का एक बाबा होगा। गुरू हरगोविन्द के पुत्र तेगबहादुर (1664– 1675 ई0) गुरू हरिकिशन के उत्तराधिकारी बने।

गुरू तेगबहादुर को प्रारम्भ में आन्तरिक कठिनाइयों का सामना करना पड़ा इसी कारण उन्होंने मखोवाल नामक स्थान पर अपनी गद्दी स्थापित की जहाँ आनन्दपुर साहिब नामक नगर बसाया। औरंगजेब से शत्रुता तो इन्हें विरासत में मिली थी, औरंगजेब ने गुरू को दरबार में उपस्थित होने के लिए बुलाया था और उन पर शांति भंग करने का आरोप लगाया परन्तु अम्बर के राजा जयसिंह के पुत्र रामसिंह के बीच में पड़ने के ही कारण औरंगजेब ने कुछ समय तक इनके विरूद्ध कोई कठोर कदम नहीं उठाया। गुरू तेगबहादुर ने पूर्वी भारत का भ्रमण किया ,जिस समय रामसिंह को असम अभियान पर भेजा गया था उस समय गुरू तेगबहादुर बिहार और बंगाल में भ्रमण कर रहे थे वह रामसिंह के साथ असम तक गये वहाँ से वापस आकर एक वर्ष कीरतपुर में निवास किया। इसके बाद मध्य पंजाब में घूमकर किसानों के बीच धर्म प्रचार किया और किसानों की दैनिक समस्याओं में भी भाग लिया ऐसा पहले किसी भी गुरू ने नही किया था। उन्होंने औरंगजेब की धार्मिक नीति का विरोध और किसानों को निडर रहने को कहा। इससे मुगल अधिकारी गुरू के प्रति शंकालु हो गये कि, संभवतया गुरू ही जनसाधारण के विद्रोह के लिए उत्तरदायी हैं। औरंगजेब की दृष्टि में यह एक बड़ा अपराध और खतरा था क्योंकि इसी समय जाटों और सतनामियों ने भी विद्रोह किया था। ऐसे मे एक गुरू के नेतृत्व में जो अपने को सच्चा बादशाह कहता था, पंजाब में हो सकने वाले विद्रोह को औरंगजेब बर्दाश्त करने के लिए तत्पर नहीं था वस्तुतः गुरू तेगबहादुर के प्रति मुगल प्रशासन की आशंका निर्मूल थी। क्योंकि तेगबहादुर ने सैन्य संचालन करने, मुगल प्रशासन या बादशाह के विरूद्ध विद्रोह की भावना को फैलाने का प्रयत्न कभी नहीं किया था। उनका मुख्य भाव निर्भय होकर अपने धर्म तथा कर्त्तव्य का पालन करना था। दूसरी तरफ कश्मीर का मुगल

सूबेदार उस समय औरंगजेब के आदेश पर मन्दिरों को तोड़ने और हिन्दुओं को मुसलमान बनाने की नीति को कठोरता से लागू कर रहा था। उसने उन्हें मृत्यु या इस्लाम में से एक को चुनने के लिए छः माह का समय दिया। कश्मीरी पंडितों ने गुरू तेगबहादुर से सलाह माँगी, गुरू ने उनसे औरंगजेब से मिलकर यह शर्त रखने की सलाह दी कि, यदि गुरू तेगबहादुर इस्लाम स्वीकार कर लेंगे तो हम भी कर लेंगें। जब यह शर्त औरंगजेब को बताई गयी तो उसने गुरू को कैद करने का आदेश दिया। गुरू को कैद कर दिल्ली लाया गया, जहाँ उन्हें इस्लाम स्वीकार करने को कहा गया जिसे मना करने पर गुरू तेगबहादुर को पाँच दिन तक अनेक यातनायें देने के पश्चात विद्रोही घोषित कर कत्ल कर (11दि0 1675 ई0) दिया गया। वस्तुतः यह सिख धर्म पर किया गया दूसरा गम्भीर धार्मिक अत्याचार था। गुरू अर्जुन की भाँति ही गुरू तेगबहादुर को भी दण्डित किया गया दोनो ही धार्मिक सम्प्रदाय के प्रधान थे अतः इनके अनुयायियों ने इसे मुगलों का सिखों के प्रति धार्मिक अत्याचार समझा। जबकि मुगल इसे राज्य से विद्रोह के कारण राजनीतिक आधार पर दण्डित करने का तर्क रखते हैं। डॉ0 नारंग के मतानुसार," गुरू की हत्या सारे देश के हिन्दुओं द्वारा उनके धर्म के प्रति बलिदान माना जाता था। सारे पंजाब में अपमान और प्रतिशोध की ज्वाला भड़क उठी"। गुरू तेगबहादुर की हत्या ने उनके पुत्र के जीवन में बड़ी क्रांति ला दी।

गुरू तेगबहादुर की हत्या के समय उनके पुत्र गोविन्द सिंह की अवस्था केवल 15 वर्ष थी। अपने पिता की निर्मम हत्या ने बालक गुरू गोविन्द सिंह (1675–1708 ई0) के मस्तिष्क पर गहरा प्रभाव डाला था। इस घटना के बाद गुरू गोविन्द सिंह मुगलों के कट्टर शत्रु बन गये। मुगलों से प्रतिकार हेतु उन्होंने सिखों की शक्ति संगठन एवं उनकी सैनिक क्षमता को बढ़ाने पर अधिक बल दिया। फलतः 1699 ई0 में गुरू गोविन्द सिंह ने 'खालसा' की स्थापना की और आनन्दपुर को सिखों का प्रमुख केन्द्र बनाया। गुरू गोविन्द सिंह ने सिखों में आत्मविश्वास और साहस उत्पन्न किया तथा शक्तिशाली खालसा सेना तैयार करने में सफलता प्राप्त की। गुरू गोविन्द सिंह के साथ मुगलों का संघर्ष राजनीतिक कारणों से हुआ। जदुनाथ सरकार इस तथ्य को स्वीकार करते हुए लिखते हैं कि," वह गढ़वाल में जम्मू से श्रीनगर तक पहाड़ी राजाओं से निरंतर लड़ता भिड़ता रहा। उसके अनुयायियों की मारकाट एवं स्वयं उसकी महत्वाकांक्षा से वे घबरा उठे।" अतः बादशाह के लिए यह नितांत आवश्यक था कि वह सिखों का दमन कर शांति एवं सुव्यवस्था स्थापित करें। इसके अतिरिक्त विलासपुर के राजा एवं स्थानीय पहाड़ी क्षेत्रों के राजाओं ने भी सिखों के विरूद्ध बादशाह से सहायता की याचना की। गुरूगोविन्द सिंह के विरूद्ध औरंगजेब ने सेनायें भेजी, स्थानीय मुगल पदाधिकारी भी निरंतर युद्ध किये और पाँच बार उनके आनन्दपुर में निवास स्थान को घेरा परन्तु उन्होंने साहस न छोड़ा। वह एक स्थान से दूसरे स्थान जाकर लड़ते रहे। सरहिन्द के राज्यपाल वजीर खाँ ने अपनी सेना भेजी और 1703–04 ई0 में आनन्दपुर में युद्ध हुआ जिसका सिखों ने डटकर मुकाबला किया किया किन्तु अन्ततः उन्हें आनन्दपुर छोड़ना पड़ा। गुरू के दो पुत्र फतेह सिंह और जुझार सिंह पकड़ लिए गये और सरहिन्द ले जाकर दीवार में जिन्दा चिनवा दिया गया, पुनः चमकौर में युद्ध हुआ और गुरू के दो और पुत्र खेत रहें। अन्त में गुरू औरंगजेब से शांतिवार्ता हेतु तैयार हो गये, उसे सम्बोधित करते हुए उन्होनें फारसी में जफरनामा की रचना की, जिससे प्रभावित होकर औरंगजब ने उन्हें अपनी सेवा में उपस्थ्ति होने का आदेश दिया। परन्तु गुरू गोविन्द सिंह के दक्षिण पहुँचने के पहले ही औरंगजेब की 1707 ई0 में मृत्यु हो गयी। औरंगजेब के पुत्र बहादुरशाह ने गुरू को पाँच हजार का मनसब दिया। गुरू बादशाह के साथ दक्षिण अभियान पर गये जहाँ नवम्बर 1708 ई0 को गोदावरी नदी के तट पर एक पठान ने छुरा घोंपकर गुरू की हत्या कर दी।गुरू गोविन्द सिंह सिखों के अन्तिम गुरू थे उन्होंने अपनी मृत्यु से पहले गुरू की गद्दी समाप्त कर दी। उन्होंने कहा कि, जहाँ भी गुरू के उपदेशों को मानने वाले वाले पाँच सिख एकत्रित होंगें, वहाँ मैं उपस्थित रहूँगा।

दक्षिण अभियान के समय में ही गुरू गोविन्द सिंह की मुलाकात 1708 ई0 में बन्दा बहादुर से हुई थी। उसका जन्म 1670ई0 में पुंछ जिले के राजौरी गाँव में हुआ था। उसके बचपन का नाम लक्ष्मण दास था। बन्दा युवावस्था में घर छोड़ बैरागी हो गया और दक्षिण भारत चला गया और अपना नाम माधव दास रख लिया। इन्हीं परिस्थितियों में उसकी मुलाकात गुरू गोविन्द सिंह से हुई उन्होंनें उसे अपना बन्दा अर्थात् सेवक बना लिया और उसे सिखों की रक्षा का उत्तरदायित्व सौंपकर पंजाब भेजा। गुरू ने पंजाब के सिखों को बन्दा बैरागी के झण्डे के नीचे एकत्र होने का आदेश दिया। बन्दा ने गुरू का सन्देश सिखों तक पहुँचाया और मुगलों के अत्याचार के विरूद्ध उसने अपना संघर्ष सोनीपत से आरम्भ किया। वस्तुतः इस समय बहादुरशाह गद्दी पर

आसीन था और अपनी स्थिति सुदृढ़ करने में लगा था। बन्दा को सोनीपत में सफलता मिली और उसने आगे बढ़कर सरहिन्द पर आक्रमण किया जहाँ फौजदार वजीर खाँ मारा गया तथा उसकी अपार सम्पत्ति बन्दा के हाथ लगी। मुगल बादशाह पहले दक्षिण में और उसके बाद राजपूत शासकों के विरोध को दबाने में व्यस्त रहा। इस कारण बन्दा ने पंजाब ही नहीं गंगा यमुना–दोआब में सहारनपुर और निकट के क्षेत्रों पर आक्रमण किए। बहादुरशाह सिखों के प्रति उदासीन नहीं था उसने फिरोज खाँ के नेत्तृत्व में बन्दा को दबाने के लिए एक सेना भेजी। मुगल सेना ने लौहगढ़ के दुर्ग को घेर लिया घेरा कई मास तक चलता रहा अंत में मुगलों का लौहगढ़ पर अधिकार हो गया लेकिन बन्दा बच निकलने में सफल रहा। परन्तु बन्दाबहादुर ने साहस नहीं छोड़ा निरंतर मुगलों से संघर्ष करता रहा। नये बादशाह जहाँदारशाह और फर्रूखसियर भी सिखों के विद्रोह को दबाने के लिए कटिबद्ध रहे परन्तु बहादुरशाह की मृत्यु के बाद मुगल साम्राज्य में अशान्ति एवं अव्यवस्था व्याप्त हो गयी। इसका लाभ उठाकर बन्दा बैरागी ने 1712 ई0 में साधौरा तथा लौहगढ़ को पुनः अधिकृत कर लिया। उसके लौहगढ़ के निकट गुरूदासपुर के दुर्ग का निर्माण करवाया। बादशाह फर्रूखसियर ने लाहौर के गवर्नर अब्दुल समद खाँ को सिखों के दमन के लिए नियुक्त किया। 1713 ई0 में मुगल सेना ने गुरूदासपुर पर आक्रमण किया सिखों को वहाँ से पीछे हटना पड़ा और लौहगढ़ में शरण लेना पड़ा। परन्तु वहाँ भी इनके पैर न टिक सके। मुगल सेना ने बन्दा का पीछा किया तथा उसे गुरूदासपुर लौटने के लिए बाध्य किया, बन्दा ने गुरूदासपुर के दुर्ग में शरण ली। इसी समय शाही सेना ने दुर्ग का घेरा डाल दिया, लगभग आठ माह के घेरा के बाद बन्दा बैरागी ने आत्मसमर्पण कर दिया और बन्दा व उसके साथियों को पकड़ कर दिल्ली लाया गया जहाँ इस्लाम को स्वीकार करने से मना करने पर उनका जून 1716 ई0 को वध कर दिया गया। बन्दा की मृत्यु के बाद सिख नेतृत्व विहीन हो गए और उनके सामने अब न गुरू रह गया न गुरू का बन्दा। बन्दा बहादुर के पश्चात भी सिखों और मुगलों में संघर्ष होते रहे। बन्दा ने सिखों को अपना राज्य स्थपित करने का भी विचार दिया था। इस प्रेरणा के कारण विभिन्न सिख सरदार शक्ति संगठित करने का प्रयास करते रहे, ऐसे मुगलो से संघर्ष स्वाभाविक था। इसके बाद वर्षों तक पंजाब अफगान, मुगल और मराठों की राजनीति का शिकार रहा। अहमदशाह अब्दाली की मृत्यु के बाद पंजाब पर अफगान शासको की पकड़ भी कमजोर हो गयी तथा सिखों ने विभिन्न स्थानों पर छोटे–छोटे राज्य बना लिया जिन्हें मिस्ल के नाम से पुकारा जाता था। इसी पृष्ठभूमि में रणजीत सिंह ने पंजाब में एक सशक्त राज्य की स्थापना की।

निष्कर्ष–

मुगल–सिख सम्बन्ध के दो रूप हमें दिखाई देते हैं। प्रारम्भिक मुगल शासकों बाबर, हुमायूँ तथा अकबर के सिख गुरूओं के साथ सम्बन्ध सौहार्द पूर्ण थे। इस दौर में सिख गुरूओं ने हिन्दू और मुसलमान कौम को एक दूसरे के करीब लाने का सफल प्रयास किया। वहीं दूसरी तरफ जहाँगीर से लेकर फर्रूखसियर के काल में मुगलों के सिखों से संबन्ध संघर्षपूर्ण बने रहे। जहाँगीर ने गुरू अर्जुन देव को दण्डित कर जिस संघर्ष की शुरूवात की उसे अन्तिम परिणति तक फर्रूखसियर ने बन्दाबहादुर की हत्या के रूप में पहुँचाया। इतना ही नहीं बन्दा की मृत्यु के बाद भी मुगल–सिख सम्बन्ध तनाव पूर्ण ही बने रहे।

सन्दर्भ–

1. श्रीवास्तव अशोक, (1998). उत्तर मुगलकालीन भारत (1707–1761 ई0), पूर्वांचल प्रकाशन बक्शीपुर, गोरखपुर।
2. महाजन वी.डी. (1995). मध्यकालीन भारत (1000–1761 ई0), एस.चन्द एण्ड कम्पनी लि. रामनगर नई दिल्ली।
3. शर्मा एल.पी. – मध्यकालीन भारत (1000–1761 ई0), लक्ष्मी नारायण अग्रवाल हास्पीटलर रोड, आगरा।
4. अहमद लईक, (2002). मुगल कालीन भारत, प्रयाग पुस्तक भवन 20 ए यूनिवर्सिटी रोड।
5. श्रीवास्तव अशोक, (2001). मध्यकालीन भारत (1526–1740 ई0), पूर्वांचल प्रकाशन बक्शीपुर, गोरखपुर।